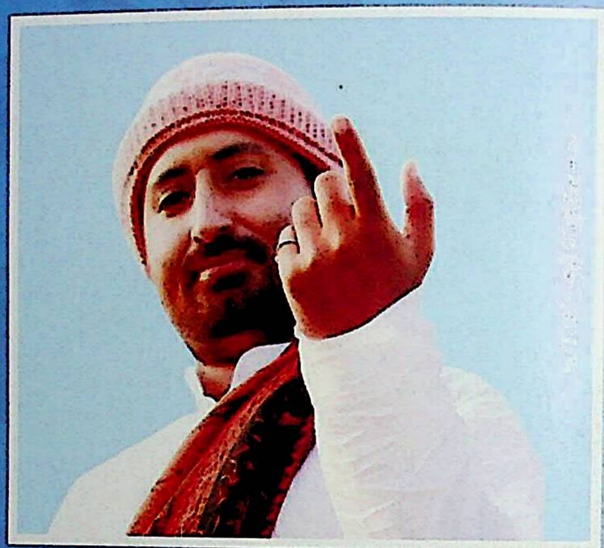
साँई उवाच

श्री श्री नारायण प्रेम साँईजी के
सत्संग-प्रवचनों से संकलित



हे भारत के जवान !

उठो और अपने को दैवी कार्य में, परोपकार के कार्य में, देशहित के कार्य में लगा दो। यह समय आलस्य की गोद में सोने का नहीं है। भारतवर्ष आपकी ओर आशाभरी नजरों से देख रहा है !

9·3

"साँई उवाच"

श्री श्री नारायण प्रेम साँई

के सत्संग प्रवचनों से संकलित

प्रकाशक :
ओजस्वी प्रकाशन
(O.H.I. प्रा. लि. की इकाई)
९, शालिग्राम II,
संत श्री आसारामजी आश्रम रोड,
साबरमती, अहमदाबाद - ३८०००५
गुजरात, भारत
फोन : 079-65230640
079-27570498, 09313277077
वेबसाइट : www.narayanpremsai.org

अंक -प्रथम
RS. 25/-

अनुक्रमणिका

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ क्र.
१.	सतत सावधानी ही साधना है	१
२.	परमात्मा सभी प्रकार से अपनी कृपा ही बरसाते हैं	३
३.	साधना का फल है – चित्त की समता	६
४.	एकाग्रता सामर्थ्य की जननी है	९
५.	आप जैसा सोचते हैं वैसा ही आपको दिखता है	११
६.	नव जवान भारत की शान	१३
७.	जीवन में आध्यात्मिक तेज होना चाहिए	१६
८.	वर्तमान समय ही उत्तम है	१९
९.	मानव आप ही अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु है।	२१
१०.	आप शक्ति के स्त्रोत हो	२८
११.	नश्वर को छोड़कर जो शाश्वत के लिए यत्न करता है, वही धन्य है।	३३

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ क्र.
१२.	वर्तमान शिक्षण प्रणाली	४०
१३.	जो मंजिल चलते हैं, वे शिकवा नहीं करते...	४४
१४.	प्रसन्न चित्त और उद्योगी कार्यकर्ता को प्रकृति हर संभव सहायता करती है	४८
१५.	स्वयं ही अपने उद्धारक बनें	५३
१६.	भगवान की कृपा की प्रतीक्षा नहीं, समीक्षा करो	५७
१७.	शरणागति का महत्व	६०
१८.	परहित सरिस धरम नहीं भाई - निःस्वार्थ बनो	६३
१९.	हटा दो निंदा नफ़रत को अगर दुनिया में जीना हो	६५
२०.	साधक को भला मुसीबत कैसी ?	६७

'साँई उवाच'

निवेदन

मानव मात्र की माँग है सुख-शांति-आनन्द-निश्चिंतता। और हर मनुष्य सुबह से शाम तक, जन्म से मृत्यु तक इसी सुख की खोज में लगा रहता है। अधिकांश लोग अपनी इस खोज में सफल नहीं हो पाते और असंतुष्ट ही मृत्यु की गोद में सो जाते हैं। कोई-कोई विरला सद्भागी ही होता है जिसे संतों का संग मिलता है, उनके द्वारा ज्ञानमयी, विवेक- दृष्टि प्राप्त होती है जिसे पाकर वह सच्चे सुख, सच्ची शांति को उपलब्ध होता है। पर जब तक यह विवेकमयी दृष्टि प्राप्त न हो, तब तक जीव बेचारा संसार के विषयों-भोगों में ही सुख ढूँढ़-ढूँढ़कर अपना जीवन खपा देता है।

तो विश्व में सबसे बड़ी से बड़ी उपलब्धि है - संतों का संग मिलना, उनके वचनों में प्रीति होना।

संतों के 'आप्तवचनों' का अपने जीवन में अनुसरण करने से मनुष्य-जीवन संसार-रूपी कीचड़ में रहते हुए भी

कमल की भाँति निर्लेप सा खिल उठता है। फिर कैसी भी परिस्थिति आए, वह उसे विचलित-विक्षिप्त नहीं कर सकती।

धन्य हैं वे जिन्हें ऐसे संतों का संग प्राप्त हुआ हो, उनके वचनों का रसास्वादन करने का सुअवसर प्राप्त हुआ हो, हो रहा हो। वे भी धन्य हैं जो ऐसे ब्रह्मनिष्ठ संतों की वाणी को जन-जन तक पहुँचाने की सेवा में भागीदार बन पाते हैं। इस पुस्तक के माध्यम से ऐसे ही जागृत, प्रगट ब्रह्मस्वरूप श्री श्री नारायण प्रेम साँईजी के आप्तवचन जन-मानस तक पहुँचाने का एक छोटा सा प्रयास किया जा रहा है। विश्वास है कि आप इन वचनों को अपने जीवन में उतारने से अवश्य लाभान्वित होंगे व आशा करते हैं कि आप इसे अन्य लोगों तक भी पहुँचाने की सेवा के अवसर से नहीं चूकेंगे। यही मानव जाति की परम सेवा है।

(१)

सतत सावधानी ही साधना है

(११ अप्रैल २००३, अहिल्यास्थान, बिहार)

बिहार के दरभंगा जिले के अहिल्या स्थान में जहाँ प्रभु श्रीराम ने गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या का उद्धार किया था, उसी स्थान पर पूज्य साँई का चार दिवसीय सत्संग समारोह आयोजित हुआ। पहले दिन के प्रथम सत्र में हजारों श्रद्धालु श्रोताओं को संबोधित करते हुए पूज्यश्री ने कहा –

सतत सावधानी ही साधना है। असावधानी और लापरवाही असफलता का कारण है। चाहे कोई भी कार्य करो, उसमें सावधानी आवश्यक है। असावधान मछली काँटे में फँस जाती है, असावधान साँप मारा जाता है, असावधान

हिरण शेर के मुख में चला जाता है, असावधान वाहन चालक दुर्घटना कर देता है और स्वयं व दूसरों को हानि पहुँचाता है। चलने में असावधान रहे तो ठोकर खानी पड़ती है, विद्यार्थी पढ़ने में सावधान न रहे तो उत्तीर्ण नहीं हो सकता। चाहे व्यवहार हो या परमार्थ, सावधानी अत्यन्त आवश्यक है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सावधानी महत्वपूर्ण है।

जब सज्जन लोग लापरवाह रहते हैं, तो समाज में दुर्जनता बढ़ जाती है, जरा सी असावधानी बहुत बड़ी हानि कर देती है। हर एक दिन के साथ सावधानी जुड़ी है, ऐसा कोई भी कार्य न करो जिसमें असावधानी का अंश हो। जितनी-जितनी असावधानी मिटती जायेगी, सावधानी बढ़ती जायेगी, उतना ही जीवन उन्नत होता जायेगा। अपना प्रत्येक कार्य सावधानी के साथ करें और संकीर्णता से बचें। संकीर्ण बुद्धि वाले की योग्यता का विकास नहीं हो सकता, वह अपने ही विचारों के दायरे में उलझा रहता है। अत: अपने मन को विस्तृत बनाओ। बुरे से बुरे व्यक्ति में भी कुछ न कुछ अच्छाई छुपी रहती है, उसे देखकर उसे अपनाने का यत्न करो।

(२)

परमात्मा सभी प्रकार से अपनी कृपा ही बरसाते हैं

(4 मई 2003, शिवपुरी आश्रम, काठमांडू)

परम पूज्य श्री साँई आज ब्रह्मलीन संत शिवपुरी बाबा के आश्रम में पधारे हुए हैं। वहाँ के अत्यन्त सात्त्विक और शांत आंदोलनों में साधकों को संबोधित करते हुए उन्होंने अपनी मधुर वाणी में कहा –

परमात्मा अनुग्रह करके तो अपनी कृपा बरसाते ही हैं, परन्तु दंड देकर भी अपनी कृपा ही बरसाते हैं। जिस प्रकार माँ का मिठाई देना भी प्यार का स्वरूप है और थप्पड़ मारना भी प्यार का दूसरा स्वरूप ही है। अनुकूल परिस्थिति में भी उसकी कृपा का अनुभव करो और प्रतिकूल स्थिति में भी उसकी करुणा का दर्शन करो। परमात्मा की कृपा की प्रतीक्षा नहीं,

समीक्षा करो।

नास्तिक कहता है कि ईश्वर नहीं है तो यह भी तो ईश्वर की सत्ता से ही कहता है। परन्तु जो उसकी सत्ता को, महत्ता जो जानता है वह निहाल हो जाता है।

दीपक तो बुझ सकता है किन्तु सूर्य नहीं बुझता। सूर्य के अस्तित्व से ही हमारा अस्तित्व है, उसका एक बार ठीक से पता चल गया तो फिर वह हमसे दूर नहीं हो सकता। उसी प्रकार ईश्वर की सत्ता, सर्वव्यापकता का एक बार ठीक से ज्ञान हो जाए, फिर वह कभी अपने से भिन्न नहीं लगेगा। विभिन्न रूपों में, विभिन्न परिस्थितियों में, विभिन्न भाषा और शैलियों में, विभिन्न पद्धतियों द्वारा, विभिन्न लोगों द्वारा उसी एक ईश्वर की ही स्तुति-आराधना-उपासना हो रही है। विभिन्न ढंग और शैलियों द्वारा लोग उसी को पुकार रहे हैं। वह प्यारा भी निरन्तर सभी पर अपना प्रेम बरसा रहा है। जो मीरा के गिरधरनागर हैं, वही शकराचार्य के ब्रह्म हैं और भक्तों के भगवान हैं, सिक्खों के अकाल स्वरूप और मुसलमानों के खुदा भी वही हैं। शिष्यों के सद्‌गुरु भी वही हैं। चाहे कैसे भी हो पर उसे जान लो क्योंकि जानना बहुत जरूरी है। फिर चाहे

भक्ति-मार्ग से या ज्ञान-मार्ग से या फिर कर्म-मार्ग से।

जो लोग विपरीत परिस्थिति को भी अपने अनुकूल बना लेते हैं और उसमें भी ईश्वर की कृपा का अनुभव करते हैं, ऐसे लोग बादल जैसे होते हैं। जैसे बादल समुद्र का खारा पानी उठाकर उसे मीठा बना देते हैं, वैसे ही ऐसे लोग दुःखद परिस्थितियों को भी सुखद और सुन्दर बना देते हैं पर जिनकी दृष्टि फरियादात्मक है, वे तो अनुकूलता और सुख में भी ईश्वर की कृपा नहीं देख पाते और अपनी फरियाद चालू ही रखते हैं। ऐसे लोग साँप की तरह होते हैं। जैसे साँप दूध पीकर उसे विष बना देता है, वैसे ही ऐसे दुर्भाग्यशाली लोग संतों और सज्जनों की ओर से होने वाले अच्छे व्यवहार को भी दोषपूर्ण ही देखते हैं और सुखद परिस्थिति को भी दुःखद बना देते हैं।

(३)

साधना का फल है – चित्त की समता

(2 मार्च, सूरत)

जहाँगीरपुरा, वरियाव रोड स्थित संत श्री आसारामजी आश्रम में पधारे श्रीसाँई पूज्य गुरुदेव की कुटीर के निकट स्थित हजारों-लाखों लोगों की मनोकामनाएँ पूरी करनेवाले वट वृक्ष के पास ज्यों ही आकर खड़े हुए, त्यों ही चंद मिनटों में अनगिनत लोग हाथ जोड़े उपस्थित हो गये। उनमें कुछ श्रद्धालु साधक ऐसे भी हैं जिन्होंने काफी जप-तप और उपासना की थी, उनके मन में कहीं साधना का अभिमान न आ जाये, इसलिए दयालु श्रीजी ने अपने मधुर और परम हितकारी वचन कहे –

लोग माला करते हैं, जप-तप इत्यादि करते हैं, किन्तु जरा सा कुछ अपने मन के विपरीत हुआ कि अशांत हो जाते हैं, उद्विग्न हो जाते हैं, समता नहीं रहती। साधक को परिपक्व करने के लिए गुरु उसकी अनेक कसौटियाँ करते हैं। पर कोई

इसका गलत अर्थ ले तो फिर वह जाने।

साधु ते होवे न कारज हानि।

उन्नति चाहने वालों को तो ऐसा सोचना चाहिए कि अगर अपनी भूल होगी तो सुधर जायेगी और नहीं होगी तो डाँट सहन करने से चित्त की समता बढ़ेगी।

सभी साधनाओं का फल है - चित्त की समता। गीता में भी भगवान ने कहा है कि

'समत्वं योग उच्यते।'

(२,४८)

समता ही परम योग है। जितनी-जितनी समता बढ़ती जायेगी, उतना ही परिस्थिति पर हमारा नियंत्रण बढ़ता जायेगा और मान-अपमान में स्थिरता बढ़ती जायेगी और साधक की उन्नति होती जायेगी। इसलिए जप-ध्यान के साथ-साथ इन सूक्ष्म बातों का ध्यान रखना भी आवश्यक है।

परमात्मा प्राप्ति का उद्देश्य ही नहीं तो मानव जन्म का क्या अर्थ ? क्या मतलब ? क्या फायदा ? भोग तो अन्य योनियों में भी है।

महान बनने की आकांक्षा रखने वालों को उत्तम चिंतन और आदर्श कर्तव्य अपनाकर ही अपनी महानता और दूरदर्शिता सिद्ध करनी चाहिये।

(४)
एकाग्रता सामर्थ्य की जननी है

(५ मई, काठमांडू, नेपाल)

दोपहर के करीब तीन बजे हैं। नेपाल के सत्संग कार्यक्रमों की व्यस्तता के बीच भी श्रीसाँई एकांत साधना के लिए उपयुक्त स्थान खोज ही लेते हैं। आज पूज्य साँई एकांत वन में परमात्म–ध्यान में लीन हैं। वहाँ पर भी कुछ जिज्ञासु भक्तों ने उन्हें खोज ही लिया और उनकी वाणी सुनने की प्रतीक्षा में टकटकी लगाये उन्हें निहारकर भावविभोर होते गये। कुछ क्षणों बाद पूज्य श्री ने अपने नेत्रकमल खोलकर भक्तों की ओर देखा, सभी उनकी वह अमृतमयी निगाहों से गद्‌गद हो गये, आनन्दमग्न हो गये। साँई ने अपनी मधुरवाणी में कहा –

'ईश्वर के ध्यान में रहना ही बड़े से बड़ा परोपकार है। जितना–जितना आप अंतर्मुख होते जाओगे, एकाग्र होते

जाओगे, उतना ही आपके भीतर सामर्थ्य आता जायेगा। एकाग्रता-सामर्थ्य की जननी है। जैसे खेत में पानी को सही दिशा देने पर पूरे खेत की ठीक से सिंचाई होती है और फसल पकती है। ऐसे ही मन की शक्तियाँ अगर बिखर जाती हैं तो वह मूल्यहीन हो जाता है, पर वही शक्तियाँ जब एकत्रित होती हैं तो कल्पनातीत परिणाम देती हैं। असंभव लगने वाले कार्यों को भी संभव बना देती हैं।

तपःसु सर्वेषु एकाग्रता परं तपः ॥

एकाग्रता सारी तपस्याओं का मूल है। इसलिए अपने चित्त को एकाग्र करने का अभ्यास करो, परमात्मा के ध्यान और जप से, परमात्मा में विश्रांति पाने से चित्त परम एकाग्र हो जाता है और सामर्थ्य का स्रोत बन जाता है। तब सफलताएँ अपने आप खींच कर चली आती हैं। वास्तविक सुख का उद्‌गम परमात्मा में विश्रांति पाना ही है।

(५)
आप जैसा सोचते हैं वैसा ही आपको दिखता है

(२८ मार्च, सूरत)

आप जैसा सोचते हैं वैसा ही आपको दिखता है। लोग अपनी मान्यता से ही सुखी या दु:खी होते हैं, कोई किसी को सुखी या दु:खी नहीं करता। संत और भगवान सदैव हमारा हित ही सोचते हैं। वे जो कुछ करते हैं वह हमारे हित के लिए ही करते हैं, उनका डाँटना भी हमारे भले के लिए ही होता है। उनके द्वारा होने वाली प्रत्येक क्रिया हमारे हित के लिए होती है, किन्तु कुछ लोग अपने हितैषी में भी दोष देखते हैं।

'जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि'

जो जिस नज़र से संसार को देखता है, उसे वैसा ही संसार प्रतीत होता है। सूर्यपुत्री तापी नदी में पवित्र भाव से गोता लगाने से पुण्य होता है, किन्तु यदि कोई उसे सामान्य नदी मानकर उसमें स्नान करे तो उसे उतना लाभ नहीं हो सकता। दुर्योधन को श्रीकृष्ण ने आज्ञा दी कि पूरे राज्य में कितने सज्जन पुरुष हैं, ढूंढ़कर लाओ, किन्तु उसे पूरे राज्य में एक

भी सज्ञन नहीं दिखाई दिया। उसने कहा कि पूरा राज्य दुर्जनों से भरा हुआ है, एक भी सज्ञन नहीं है। युधिष्ठिर को दुर्जन खोज लाने के लिए कहा। उन्हें उसी राज्य में एक भी दुर्जन नहीं दिखा। उन्होंनें कहा कि भगवन्! राज्य में तो सभी सज्ञन हैं, एक भी दुर्जन नहीं है।

जिनकी नजर ईश्वरमय होती है उनको सब ईश्वरमय दिखाई देता है और जिसकी नजर में दोष होगा उसको सब में दोष ही दिखेगा। नामदेवजी को तो कुत्ते और भूत में भी भगवान के दर्शन हुए थे और किसी-क़िसी को संत में भी भगवान नहीं दिखते।

'दृष्टि ज्ञानमयी कृत्वा पश्येद् हरिरेव जगत्'

अपनी नजर ज्ञानमयी बना लें तो फिर पूरा विश्व परमात्ममय ही दिखेगा।

'नज़र बदली तो नज़ारे बदले
किश्ती ने बदला रुख तो किनारे बदले॥'

(६)

नव जवान भारत की शान

(7 सितम्बर, वृन्दावन)

भगवान श्रीकृष्ण की लीला भूमि वृंदावन में पूज्य साँई का चार दिवसीय सत्संग कार्यक्रम आयोजित हुआ। वहाँ पर दिल्ली और आसपास की युवा समिति के युवक श्रीसाँई से मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु आये। उनका मार्ग प्रशस्त करते हुए पूज्य श्री ने कहा –

14 से 22 साल तक की आयु में गृहण करने की शक्ति विलक्षण होती है। इन वर्षों में आप जो कुछ करना चाहते हो, कर सकते हो। यह समय क्रिया शक्ति से परिपूर्ण होता है, मन में उत्साह होता है, दिल में साहस होता है। इच्छा शक्ति, महत्वाकांक्षा और आत्मश्रद्धा इस उम्र में भरपूर होती है। इसलिए इन वर्षों में जीवन को सफलता की चरम सीमा पर ले जाना चाहिए। लौकिक पढ़ाई के साथ-साथ अलौकिक विद्या भी प्राप्त करनी चाहिए। यह समय अपने को उन्नत करने का, कुछ कर दिखाने का अमूल्य अवसर है। आध्यात्मिक साधना

करने का भी यही उत्तम समय है।

क्या आप ऐसा मानते हो कि इस उत्तम समय को व्यर्थ के कार्यों में लगाकर वृद्धावस्था में आप साधना कर पाओगे या ईश्वर की ओर चल पाओगे ? तो यह मान्यता गलत है। यही उचित समय है। अगर आप अभी से तत्परतापूर्वक अपने लक्ष्य को पाने में लग गये तो शेष जीवन आप सुखपूर्वक पार कर सकते हैं। और यदि इस युवाकाल में आप अपने जीवन का निर्माण नहीं कर पाये तो बाद में वृद्धावस्था में यह कर पाना और भी कठिन है। इसलिए एक क्षण भी व्यर्थ मत गँवाना। भारत का वर्तमान आपके हाथों में है। प्रत्येक युवा को चरित्रवान व प्रतिभावान बनना चाहिए। शक्ति की उपासना करनी चाहिए।

युवावस्था का सबसे महत्वपूर्ण आकर्षण है- उसका उभरता हुआ उत्साह, जो हर कार्य को करने की शक्ति देता है। वह मार्ग की मुसीबतों को नहीं देखता, अंधकार को नहीं देखता और यदि चाहे तो असंभव को भी संभव बना देता है। जो जीवन की दूसरी अवस्थाओं में नहीं हो सकता वह महत्वपूर्ण कार्य इस समय में हो सकता है।

हे भारत के जवान ! उठो, और अपने को दैवी कार्य में, परोपकार के कार्य में, देशहित के कार्य में लगा दो। यह समय आलस्य की गोद में सोने का नहीं है। भारतवर्ष आपकी ओर आशा भरी नज़रों से देख रहा है । अपने पुरुषार्थ द्वारा व भगवान और संतो की कृपा से यदि आप भारत को फिर से विश्वगुरु के पद पर स्थापित करने के लिए अपने कर्तव्य का पालन करने में लग जाओगे तो भोग और मोक्ष दोनों आपके चरणों में होंगे, किन्तु उसमें भी आसक्त मत होना। मुझे केवल 20 युवक और 20 युवतियाँ ऐसे मिल जायें जिनमें उत्साह, तत्परता, आज्ञापालन और ईमानदारी हो तो मैं पूरे भारत का नक्शा बदल दूँ। अभी मैं ऐसे युवकों को तैयार कर रहा हूँ। जब समाज में आयेंगे तो आप उन्हें देखते ही रह जायेंगे, ऐसी विभूतियों का निर्माण कार्य अभी जारी है ...

(७)

जीवन में आध्यात्मिक तेज होना चाहिए

(31, जनवरी, गोधरा)

गोधरा शहर के मुख्य कनेलाव तालाब के पास संतश्री आसारामजी आश्रम है, वहाँ पर साँई पधारे हुए हैं। प्रात:काल को साँई तालाब के किनारे टहलने गये, वहाँ पर कुछ मुमुक्षु साधक साधनारत हैं। श्री साँई को आते देखकर उन्हें लगा कि आज साधना और शुभ कर्म फल देने को उदित हुए हैं जिसके फलस्वरूप ब्रह्मस्वरूप श्री साँई के दुर्लभ दर्शन आज हमको सुलभ हो रहे हैं। उनकी साधना में लगन व तत्परता से प्रसन्न होकर पूज्यश्री ने अपनी अनुभवयुक्त सारगर्भित वाणी से उन्हें कृतार्थ किया।

जीवन में आध्यात्मिक तेज होना चाहिए । जीवन ओजस्वी, तेजस्वी और प्रभावशाली होना चाहिए । अपना जीवन ऐसा सुंदर बनाओ कि तुम्हें देखकर दूसरों की भी

आध्यात्मिकता और भगवद् भक्ति बढ़े । तुम्हें देखकर देखनेवालों का मस्तक आदर से झुक जाये - ऐसा उत्तम आपका जीवन होना चाहिए।

साधना करने से, भगवान की भक्ति करने से भीतर का रस प्रकट होता है। एक बार वह रस प्रकट हो जाये फिर बाहर के सुख की या रस की गुलामी नहीं करनी पड़ती, फिर विषयों के रस फीके पड़ जाते हैं।

पट्टाचार्य भगवान बुद्ध की भक्त थी। उसने भगवान बुद्ध से साध्वी दीक्षा ली। वह ऐसी तेजस्वी और आध्यात्मिक तेज से संपन्न थी कि बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु जब उसने पहला प्रवचन किया तब पहले ही सत्र में पाँच सौ महिलाएँ साध्वी हो गईं। ऐसा अद्वितीय तेज था उस महिला में !

आपका आचरण ऐसा होना चाहिए कि आपको देखकर कामी व्यक्ति भी संयमी बन जाये, भगवान का भक्त बन जाये, तभी तो आप भगवान के भक्त हुए। जो दिव्य आभा से सम्पन्न हो, प्रतिभा सम्पन्न हो, कुशाग्र बुद्धि से युक्त हो, साथ ही साथ अपने कार्य में कुशल भी हो, ऐसा जीवन ही आदर्श, सम्माननीय और अनुकरणीय होता है।

(८)

वर्तमान समय ही उत्तम है

(8 सितम्बर, वृन्दावन)

वर्तमान समय ही उत्तम समय है। आप जो भी कार्य करना चाहते हैं, वह वर्तमान समय में ही करना होगा। कल कभी नहीं आता। जब आता है तो आज बनकर ही आता है, इसलिए जिनकी कार्य करने की इच्छा है वह कभी कल पर अपना कार्य नहीं छोड़ते। जो बीत गया उसका पश्चाताप छोड़ दो, आने वाले कल की चिंता छोड़ दो और वर्तमान में ही जीओ। अपनी योग्यता और शक्ति को वर्तमान में ही कार्यान्वित करके दिखाओ। वर्तमान क्षण रॉ-मटेरियल जैसा है, उसमें से आप जो चाहे वह बना सकते हो। अगर आप योग्य समय की राह देखकर बैठे रहे तो कार्य क़भी सम्पन्न नहीं हो पायेगा। इसलिए उठो और अभी से अपने कार्य में लग जाओ।

साधक सोचता है कि कल से साधना-भजन

करूंगा। ऐसे ही यदि वह कल के भरोसे टालता रहा तो उसकी यह शुभ इच्छा कभी पूरी नहीं होगी और समय यूँ ही बीत जायेगा। इसलिए जो उचित हो, शास्त्र के अनुरूप हो, उसको तुरंत ही आरंभ कर देना चाहिए।

जो व्यक्ति वर्तमान में सुखी नहीं हो सकता, वर्तमान में नहीं जी सकता, वह भविष्य में कैसे सुखी हो सकता है ? वर्तमान में रहना सीखो क्योंकि कल कभी नहीं आता और जब आता है तो आज बनकर ही आता है। जो भूत और भविष्य के बीच के वर्तमान समय को सुधार लेता है, उसका पूरा जीवन सुधर जाता है।

इतना कहकर श्रीसाँईजी ने अपने निवास स्थान की ओर प्रस्थान किया। श्रद्धालु भक्त उनके वचनों का स्मरण, चिंतन करके संध्या भजन आदि में लग गये।

(९)

मानव आप ही अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु है।

(१६ जून, अहमदाबाद)

साबरमती नदी के तट पर अहमदाबाद के मोटेरा स्टेडियम के पास स्थित संत श्री आसारामजी आश्रम में पूज्य साँईजी ने आश्रमवासी साधकों और बाहर से आये जिज्ञासुओं को साधना पथ पर प्रगति हेतु अपनी परम हितकारी, लोक मंगलकारी वाणी में शब्दों की माला गूँथते हुए इस प्रकार कहा –

मानव आप ही अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु है। अगर मानव सत्संग, सेवा, मंत्र-जाप, ध्यान आदि के द्वारा प्राप्त शक्ति एवं योग्यता का सदुपयोग करता है तो वह आप ही अपना मित्र बनकर अपने को संसार सागर से पार करने वाला होता है। जो आप ही अपना मित्र बनता है, सारी दुनिया उसकी मित्र बन जाती है।

उद्धरेदात्मनात्मानंनात्मानमवसादयेत्।

आतमैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्।

(गीता 6, श्लोक-5, 6)

अर्थात् मानव को आप ही अपना उद्धार करना चाहिए, अपने को अधोगति की ओर नहीं ले जाना चाहिए। इस तरह अपना उद्धार करके या पतन करके मानव आप ही अपना मित्र या शत्रु बनता है। जिसने संयम और आत्मा के बल से मन को जीता है, वह अपना मित्र है और जिसने अपने मन को नहीं जीता वह आप ही अपना शत्रु है।''

जीवन विकास का नियम समझाते हुए पूज्यश्री ने कहा कि 'जो अपने को दीन-हीन बनाने वाले विचार व कर्म करता है एवं भवसागर से पार जाने का यत्न नहीं करता, रात-दिन नश्वर धन-वस्तुओं के पीछे ही जीवन का अमूल्य समय लगाता है, मृत्यु के समय धन, परिवार एवं वस्तुएँ उसके कोई काम नहीं आतीं और वह अधोगति में जाता है। जो वेद,

उपनिषद्, श्रुति, स्मृति-पुराण, रामायण, महाभारत आदि सद्ग्रंथों एवं महापुरुषों के बताये वचनों एवं युक्तियों को अपने जीवन में उतारता है, उसकी दुर्गति नहीं होती है।

गीता में भी भगवान ने कहा है कि -

'स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।'

(भगवत् गीता 2.40)

इस कर्मयोगरूपी धर्म का थोड़ा सा भी साधन जन्म-मृत्युरूप महान भव से रक्षा कर लेता है।

'न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिंतात गच्छति'

(भगवत् गीता 6.40)

शुभ कर्म करने वाले की कभी दुर्गति नहीं होती । आत्मोद्धार के लिए अर्थात् भगवत्प्राप्ति के लिए कर्म करनेवाला कोई भी मानव दुर्गति को प्राप्त नहीं होता ।

जो स्वयं की मदद करता है, अपना उत्थान करता है, उसे प्रकृति भी मदद करती है, और गुरु एवं भगवान की कृपा भी उसे सहायभूत होती है।

जो अपने साथ शत्रुता का व्यवहार करता है, तैंतीस करोड़ देवता मिलकर भी उसे सुखी नहीं कर सकते। मनमुखी न बनकर गुरुमुखी जीवन यापन किया जाये तो महान बनना अति सरल है और पतित होना उतना ही मुश्किल।

पुराणों में एक कथा आती है कि एक कीड़ा बड़ी तेजी से सड़क पार कर रहा था। वहाँ से भगवान वेदव्यास पार हो रहे थे। उन्होंने उस कीड़े से पूछा - 'इतनी तेजी से कहाँ जा रहा है ?' उसने कहा कि 'सामने से बैलगाड़ी आ रही है, अगर मैं तेजी से सड़क से पार नहीं हुआ तो कुचला जाऊँगा।' वेदव्यासजी ने कहा 'तू कीड़ा है, मर भी जायेगा तो क्या हर्ज है ? तुझे इस शरीर से मुक्ति मिल जायेगी।' तब उस कीड़े ने कहा कि 'भगवन्, आप तो जानते हैं कि जीव जिस शरीर में रहता है उसमें उसे प्रीति होती है, इस हेतु मुझे भी यह शरीर प्रिय है और मैं मरना नहीं चाहता।' कीड़े की बात सुनकर महर्षि ने उसे कहा कि 'तू मेरी बात मान ले और बैलगाड़ी को पसार होने दे, तुझे और भी अच्छी योनी मिलेगी।' उस कीड़े ने संत की बात मान ली। बैलगाड़ी आयी और वह कीड़ा मर गया। बाद में वह हिरण बना, गाय बना, ऐसे करते-करते उसका एक पवित्र ब्राह्मण के घर जन्म हुआ। फिर एक ऋषि के घर उसका

जन्म हुआ। वही मैत्रेयी ऋषि के नाम से विख्यात हुआ।

एक कीड़ा भी संत की बात मानता है तो मैत्रेयी ऋषि बन जाता है, तो अगर मानव संत की आज्ञा मान ले तो कहना ही क्या ?

उदाहरणों और सरल युक्तियों द्वारा अपनी अनुभवयुक्त वाणी से साधकों के मन के संशयों का निवारण करते हुए साँई ने कहा कि–

मन का स्वभाव पानी जैसा है, उसे जिस ओर मोड़ा जाये उसी ओर वह मुड़ जाता है। पानी का स्वभाव नीचे की ओर बहना है, किन्तु प्रयत्न और पुरुषार्थ से उसे सैकड़ों फुट ऊपर भी ले जाया जा सकता है। नीचे बहना सरल है, ऊपर चढ़ना कठिन है। वैसे ही मन का स्वभाव ही बहिर्मुख होना है, पतन की ओर जाना है, किन्तु यत्न करने से वह संयमित, एकाग्र, शांत, स्थिर, सूक्ष्म एवं उन्नत भी हो सकता है। चंचल, अस्थिर और बहिर्मुख मन को एकाग्र और स्थिर बनाना ही तो साधना है। यही तो पुरुषार्थ है कि अपने मन को संसार से मोड़कर परमात्माभिमुख करना। अगर इसमें चूक कर गये और अपने साथ शत्रुता का व्यवहार किया तो चौरासी लाख जन्मों

में भटकना पड़ेगा। अत: मन के चक्कर से सावधान!

कबीरजी ने ठीक कहा है –

माया मरी न मन मरा, मर–मर गये शरीर।
आशा तृष्णा ना मरी, कह गये दास कबीर ॥

शास्त्रों में कहा है –

मन एव मनुष्याणां कारणंबन्धमोक्षयो:

मन ही मानव के बन्धन और मोक्ष का कारण है। मन के चंचल स्वभाव को स्वीकार करते हुए भगवान ने गीता में कहा है –

असंशयंमहाबाहो मनो दुर्निग्रहंचलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥

(भगवत् गीता 6.35)

हे महाबाहो! नि:संदेह मन चंचल और कठिनता से वश में होने वाला है परन्तु हे कुन्ती पुत्र अर्जुन! यह अभ्यास और वैराग्य से वश में होता है।

यदि आप भी यत्न करें तो मन को जीतने में आप भी अवश्य सफल हो सकते हो।

(१०)

आप शक्ति के स्त्रोत हो ....

(2 जुलाई 1999, भावनगर)

भावनगर शहर से करीब 12 कि.मी. की दूरी पर बुधेल आश्रम में पूज्य साँई एकांतवास हेतु पधारे। जहाँ पर पूर्ण विकसित सुवासित कुसुम होता है वहाँ पर मधुमक्खियाँ अपने आप आकर्षित होकर पहुँच जाती हैं। वैसे ही न जाने कहाँ–कहाँ से जिज्ञासु भक्तों को साँई के आगमन का पता चल गया और सैकड़ों साधक भक्त साँई के दर्शन एवं सत्संग हेतु आश्रम में बिना बुलाये पहुँच गये। प्रात:काल का समय था, आश्रम के आसपास सिर्फ खेत और झाड़ियाँ और संसार के कोलाहल से परे केवल पक्षियों की मधुर चहचहाहट थी। भगवान भुवन–भास्कर अपनी कोमल रश्मियों से संसार में आलोक बिखेर रहे थे। ऐसे में पूज्य साँई की पावन उपस्थिति वातावरण को और भी सुहावना बना रही थी। लगता था किसी अनोखी दुनिया में

पहुँच गये हों। भक्तों के बहुत अनुरोध करने पर श्रीसाँई ने परम हितकारी वचन कहे –

जैसे चावल का एक दाना भी पतीले में रहे पूरे चावल की खबर देता है, फूल की जरा सी सुगंध पूरे बाग की खबर देती है, उसी प्रकार ईश्वर का अंश भी ईश्वरत्व की खबर देता है।

ऐसी कोई वनस्पति नहीं जो औषधि न बन सके, ऐसी कोई ईंट नहीं जो इमारत के काम न आ सके, ऐसा कोई अक्षर नहीं जो मंत्र न बन सके, ठीक इसी प्रकार ऐसा कोई मानव नहीं जो महेश्वर न बन सके, ऐसी कोई आत्मा नहीं जो परमात्मा न बन सके, ऐसा कोई जीव नहीं जो शिव न बन सके। क्या कोई जान सकता है कि वटवृक्ष के एक बीज में कितने वट वृक्ष छिपे हैं ? आम की एक गुठली में कितने आम के वृक्ष छिपे हैं ?

प्रत्येक व्यक्ति में अपार सामर्थ्य निहित है। जरूरत है तो केवल उसे जागृत करने की। उसे जागृत किया जाये तो वह कितनी ऊँचाई पर पहुँच सकता है – इसका अनुमान लगाना भी मुश्किल हो जायेगा।

लोग कहते हैं जिसको ईश्वर में श्रद्धा नहीं, वह नास्तिक

है, किन्तु मैं कहता हूँ जिसे अपने आप में श्रद्धा नहीं, वह महानास्तिक है। उसके लिए मुक्ति संभव नहीं है। अपने आप में श्रद्धा रखो और अपने पैरों पर खड़े रहो। महान होने के लिए ही आपका जन्म हुआ है। स्वामी विवेकान्नद कहते थे कि 'आप ईश्वर में विश्वास करो, इससे कहीं ज्यादा जरूरी है अपने में विश्वास करना।'

जगत का इतिहास क्या है ? कुछ ऐसे ही मुट्ठीभर लोगों की कहानी तो है जिन्हें अपने आप पर विश्वास था। ऐसे व्यक्ति विश्व में क्रांति कर सकते हैं, संसार में उथल-पुथल कर सकते हैं, हवाओं का रुख बदल सकते हैं। विचारों की धारा को परिवर्तित कर सकते हैं। उनकी संकल्पशक्ति परिस्थितियों को पलट सकती है। संकल्प शक्ति की सुदृढ़ता सब कुछ करने में सक्षम है।

मौत का बेरहम इतिहास बदल सकते हो,
पुण्य में पाप का विश्वास बदल सकते हो।
अपनी बाहों पर भरोसा रखो तो,
यह तो धरती है, तुम आसमान भी बदल सकते हो।

अपने में छुपी शक्तियों को पहचानो। अपने को कमजोर क्यों मानते हो ? जो अपने को दीन-हीन और लाचार मानता है वह लाचार ही हो जाता है। जो अपने को दुःखी मानता है वह दुःखी ही रहता है। जो अपने को भगवान का और भगवान को अपना मानता है वह वास्तव में परम सुखी हो जाता है, सफलता उसके कदम चूमती है। अपने देवत्व को याद करो और 'न दैन्यं न पलायनम्' का सिद्धान्त अपनाते हुए आगे बढ़ो, आगे बढ़ो।

"चरे वेति-चरे वेति"

ऐसे पुरुषार्थी वीरों का कहना है कि -

कार्यम् साधयामि वा देहं पातयामि।

या तो मैं मेरे कार्य को सिद्ध करूंगा, या शरीर का ही त्याग कर दूँगा।

अपने आप को शक्तिशाली बनाओ। सफलता की सीढ़ियों पर कदम रखते हुए आगे बढ़ो। विफलता से अपने आपको हतोत्साहित मत होने दो।

मत देखो कितनी दूरी है,

कितना लम्बा मग है !

और न देखो आज तुम्हारे

साथ कहाँ तक जग है !

लक्ष्य प्राप्ति की बलिवेदी पर,

अपना तन-मन वारो।

हिम्मत कभी न हारो,

साधो ! हिम्मत कभी न हारो !!

हर कुशल पहलवान चोट खाकर दुगनी ताकत से वार करता है, इसी प्रकार साधक जीवन में भी विपत्ति, कठिनाई आये तो दुगनी तेजी से और उत्साह से अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ़ना चाहिए।

ॐ....ॐ....ॐ....

(११)

नश्वर को छोड़कर जो शाश्वत के लिए यत्न करता है, वही धन्य है।

(12 मार्च 1998, अहमदाबाद)

कई वर्षों के बाद इस वर्ष सूरत में नहीं अपितु अहमदाबाद आश्रम में होली शिविर का आयोजन हुआ। यह शिविर पूज्य साँई के सान्निध्य में हुआ। शिविर के प्रथम दिवस के सायंकाल के संध्या का समय है। साबरमती नदी का तट है, हजारों साधकों के जप-ध्यान के सात्त्विक परमाणु और पूज्य साँई की उपस्थिति वातावरण को धन्य बना रही है। पूज्य साँई ने मुमुक्षु साधकों को विवेक-वैराग्य बढ़ाने हेतु जीवन रहस्य का उद्घाटन करते हुए कहा -

मन की इच्छाएँ और कामनाएँ पूरी करने हेतु मानव एक दो नहीं अनेकानेक वर्ष व्यर्थ ही गँवाता है और ईश्वर प्राप्ति रूपी जो महत्वपूर्ण कार्य करना है, वह रह ही जाता है। इन्द्रियों और विषयों के संसर्ग से मिलने वाला सुख टिकता नहीं है, चाहे आप टिकाने की कितनी ही कोशिश कर लें। इन्द्रियाँ तो सदैव

विषयों की ही इच्छा करती हैं पर धनभागी हैं वे साधक जो नश्वर भोगों को छोड़कर शाश्वत परमात्मा को चाहते हैं एवं उसकी प्राप्ति के लिए यत्न करते हैं।

प्राय: जब मनुष्य की आयुष्य पूरी होने लगती है तभी उसका विवेक जागता है और उसकी ईश्वर भजन में रुचि जागृत होती है। परन्तु तब तक महत्त्वपूर्ण समय बीत चुका होता है और इन्द्रियों में साधना करने का बल ही नहीं होता और न ही मन में उत्साह ही रहता है। लेकिन जो विवेकी हैं वे पहले से ही सावधान हो जाते हैं और चलने की शक्ति खत्म हो, उससे पहले ही शाश्वत परमात्मा की ओर अपने कदमों को आगे बढ़ा देते हैं।

जब तक नींबू व गन्ने में रस होता है, तब तक ही उसका मूल्य होता है। रस निकाल देने के बाद उन्हें फेंक दिया जाता है, ठीक उसी प्रकार मानव के पास जब तक यौवन, धन-सम्पत्ति, योग्यता आदि हैं, तब तक संसारी जन उसे पूछते हैं, उसे मानते हैं। जब ये चीजें नहीं रहतीं तब उसकी ओर देखते तक नहीं हैं।

ऐसे कई किस्से हमें समाज में देखने को मिलते हैं।

इकलौते पुत्र को मोहवश पाल-पोस कर बड़ा किया, वह विदेश चला गया, अब माता-पिता को पूछता तक नहीं। क्यों ? क्योंकि वृद्ध माता-पिता अब उसके कोई काम में नहीं आते। जो बुद्धिमान है, वह अपने विवेक का उपयोग करके समय रहते ही, युवावस्था में ही शाश्वत परमात्मा को पाने में लग जाता है।

परिवर्तनशील, नश्वर संसार के रीति-रिवाजों में उलझकर सत्य को तिलांजलि मत दो। भगवान को छोड़कर भोग में उलझ जाना मूर्खता नहीं तो और क्या है ? अगर आप में हिम्मत है तो संसार के मायाजाल से बाहर निकलकर इसी जन्म में ईश्वर को प्राप्त कर लो, अपने वास्तविक स्वरूप को जान लो।

केवल पुरुषार्थ करना ही पर्याप्त नहीं है, किन्तु आपका पुरुषार्थ किस दशा में हो रहा है, यह देखना भी जरूरी है। नश्वर की दिशा में या फिर शाश्वत की दिशा में ? संसार की चीजों की प्राप्ति के लिए जितना यत्न करते हो, उससे आधा भी भगवान की प्राप्ति होने के लिए यत्न करो तो जीवन की शाम होने से पहले जीवनदाता से मुलाकात हो सकती है।

जीवनदाता के गीत आपके जीवन में गूँज सकते हैं।

सिर्फ पेट भरने और बच्चे पैदा करने के लिए ही यह अमूल्य मानव तन नहीं मिला है, इतना तो पशु-पक्षी भी कर लेते हैं। अगर मानव जीवन पाकर भी आपने सिर्फ इतना ही किया तो मानव और पशु में क्या अंतर रह गया ?

आहारनिद्राभयमैथुनंच

सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम्।

भोजन करना, भयभीत होना, मैथुन करना और सो जाना - इन बातों में पशु और मानव दोनों समान हैं। नीति शतक में कहा है कि -

येषां न विद्या न तपो न दानं

ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्म।

ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता

मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।

(नीति शतक - 13)

जिन पुरुषों के पास विद्या नहीं, तप नहीं, दान नहीं, ज्ञान

नहीं एवं शील नहीं, गुण या धर्म भी नहीं है, वे मृत्युलोक में पृथ्वी पर भाररूप होकर मानव-रूप में पशु के समान ही हैं।

एक-एक श्वास बहुत मूल्यवान है। एक बार साँस निकलने के बाद वह पुन: नहीं आ सकता। प्रत्येक श्वास को सार्थक करने का एक ही उपाय है - नश्वर की आशा छोड़कर शाश्वत की ओर अग्रसर होना। यह ऐसा पुरुषार्थ है जैसे बिजली की चमक में सुई में धागा पिरोना।

कार्य भले कठिन प्रतीत हो पर है सबसे ऊँचा ! अपने कीमती समय को इसी ऊँचे कार्य में लगाना - यही बुद्धिमानी है। इसलिए खूब समझदारी से अपने समय का उपयोग करो।

परमात्मा प्राप्ति के लिए दो चीजें जरूरी हैं -

(1) नि:स्वार्थ सेवा - बदले की अपेक्षा बिना परहित की भावना से की जाने वाली सेवा संसार की आसक्ति को क्षीण करके हृदय को शुद्ध बना देती है और शुद्ध हृदय में ही परमात्मा प्रकट होते हैं।

2. अपने गुरु, भगवान या आदर्श के प्रति वफादारी - जिनके चरणों में एक बार सिर झुकाया उनके प्रति बेवफाई नहीं होनी

चाहिए। इष्ट के प्रति वफादारी होने से परमात्मा के प्रति अनुराग बढ़ता जायेगा, भक्ति में एकात्मकता आती जायेगी जिससे दिव्य ज्ञान की प्राप्ति होगी।

यदि ये दो चीजें आपके पास हैं - निस्वार्थ सेवा और गुरु/भगवान के प्रति वफादारी तो आपको डरने की कोई आवश्यकता नहीं ! ये साधन आपको अपने आप साध्य तक पहुँचा देंगे।

ॐ शांति.... ॐ आनंद.... ॐ नित्य रसानुभूति...

भगवान और उनकी भक्ति के बीच किसी को न आने दो। केवल भगवान को ही चाहो। दुनिया आपको चाहे कुछ भी कहे, किन्तु आप उसकी परवाह किये बिना अपने पथ पर अडिग रहो। अवश्य ही जीवन सार्थक कर लोगे। क्योंकि उनके बिना सच्चा जीवन हो ही नहीं सकता। मैं सच कहता हूँ, तुम उन्हें देखोगे तो उन्हीं के हो जाओगे।

वास्तव में भगवान के बिना जिन्दगी का कोई अर्थ ही नहीं है। अत: परमात्मा को अपना सर्वस्व, प्राण-प्रिय और अत्यंत निकट से निकटतम मानकर उनके लिए ही सर्व कार्य करते हुए अपना और अपने संपर्क में आने वालों का कल्याण करें, इसी में सबकी भलाई है।

(१२)

वर्तमान शिक्षण प्रणाली

(7 सितम्बर, वृन्दावन)

वृन्दावन में पूज्य साँई के सत्संग में दिल्ली व आसपास के क्षेत्रों के कुछ शिक्षक एवं विद्यार्थी आये। सत्संग प्रवचन के बाद पूज्यश्री के निवास स्थान पर भी वे लोग विशेष मार्गदर्शन एवं सत्संग हेतु पहुँच गये। वहाँ पर शिक्षकों से वार्तालाप के दौरान वर्तमान शिक्षण प्रणाली विषयक चर्चा हुई। उस पर श्रीजी ने अपने विचारों को प्रकट करते हुए कहा –

आज की शिक्षा व्यवस्था कैसी है ? मैं एक बार ट्रेन में जा रहा था। वहाँ एक लड़का आया बूट पॉलिश करने के लिए। मैंने उससे पूछा कहाँ तक पढ़े हो ? तो वह बोला कि एम.ए. तक। मुझे बड़ा आश्चर्य और दु:ख हुआ कि इतने वर्ष पढ़ाई में खर्च करने के बाद भी बूट पॉलिश ही करनी पड़ रही है !

आज के युग में मनुष्य के जीवन का महत्वपूर्ण समय तो लौकिक विद्या पाने में ही चला जाता है और फिर नौकरी ढूँढ़ने में ! अलौकिक विद्या की शून्यता के परिणामस्वरूप आज के युवकों में जीवन-संघर्ष में उपयोगी व्यावहारिक ज्ञान की भी कमी है।

वास्तव में विद्या क्या है ?

'सा विद्या या विमुक्तये'

विद्या वही है जो मुक्त कर दे। आजकल की पढ़ाई केवल पेट भरने की विद्या है और सभी उसी में कितने ही वर्ष लगा देते हैं। अपना पेट भरना तो कुत्ता भी जानता है, चिड़िया भी जानती है। तो आपने मानव होकर इतना ही सीखा तो क्या तीर मार लिया ? इस लौकिक पढ़ाई से आपको जन्म-मरण के चक्कर से मुक्ति नहीं मिल सकती। अरे, मुक्ति तो क्या, नौकरी के लिए भी कितने यत्न करने पड़ते हैं, वह भी सरलता से नहीं मिलती।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली को देखकर मुझे अत्यंत दु:ख होता है। आश्चर्य है कि विद्यालयों में व्यावहारिक जीवन की

तालीम नहीं दी जाती ! इसका मतलब यह नहीं कि मैं लौकिक विद्या का विरोध करता हूँ। यह विद्या आप भले ही पढ़ो किन्तु साथ ही साथ जीवन जीने के लिए भौतिक विद्या, योग विद्या और अध्यात्म विद्या भी पढ़नी चाहिये। वही आपको भोग और मोक्ष दोनों प्रदान कर सकती है।

कई महापुरुषों ने लौकिक पढ़ाई नहीं की थी, किन्तु आत्म विद्या और योग विद्या के धनी थे, तो उनको हम आज भी याद करते हैं और करते रहेंगे। पूज्य लीलाशाह बापू भी लौकिक विद्या नहीं पढ़े थे, अपने हस्ताक्षर करने में भी उन्हें पाँच मिनट लगते थे, किन्तु ब्रह्मविद्या में वे निपुण थे तो बड़े-बड़े डॉक्टर, वकील, इंजीनियर उनके भक्त थे। उनके चरणों में शीश झुकाने में वे अपना अहोभाग्य समझते थे। चलती हुई ट्रेन को रोकने का सामर्थ्य उनमें था ! योग सामर्थ्य के वे धनी थे। तो आप लौकिक और अलौकिक दोनों विद्या में प्रवीण हों, ऐसा हम चाहते हैं।

शिक्षकगण एवं विद्यार्थीगण श्रीसाँई की अनुभव सम्पन्न बातों से अत्यंत प्रभावित हुए, क्योंकि उन्हें अपने जीवन में यह बात प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रही थी। स्वयं पूज्यश्री ने स्कूली विद्या भी मुश्किल से पूरी की है, किन्तु व्यावहारिक ज्ञान में

उनकी कुशलता अद्वितीय है। आश्रम-संचालन के साथ-साथ संगीत, गायन, वादन, पाक-कला, काव्य, लेखन, व्यवस्थापन आदि विद्याओं में उनकी निपुणता देखते ही बनती है। इन लौकिक विद्याओं के साथ-साथ योग विद्या और तत्त्वज्ञान में भी वे पारंगत हैं। ऐसे कुशल आचार्य का मार्गदर्शन पाकर शिक्षकगणों ने कृतज्ञता का अनुभव किया।

(१३)

जो मंजिल चलते हैं, वे शिकवा नहीं करते...

(20 मई, हरिद्वार)

हिन्दुओं के पवित्र तीर्थ–धाम हरिद्वार में पतित पावनी भागीरथी के तट पर सप्तर्षि हरिपुरकलां में स्थित संत श्री आसारामजी आश्रम में श्रीसाँई पधारे। आश्रम से सटा हुआ ही अरण्य है और भगवती गंगा भी वहीं से होकर बहती है। श्रीजी एकान्त अरण्य में गंगा स्नान करके आत्म मस्ती में टहल रहे हैं और वहाँ रहने वाले साधुओं से वार्तालाप कर रहे हैं। थोड़ी ही देर में श्रद्धालु भक्तों का भी वहाँ पर आगमन शुरु हो गया। उन्होंने पूज्यश्री से सत्संग की याचना की। पूज्य साँई अभी भी ईश्वरीय मस्ती में मस्त हैं, उनकी आँखें मानो अमृत बरसा रहीं हैं। उन्होंने कहा –

हम पर भगवान की कितनी कृपा है, इसका अगर हमें पता चल जाये तो हमारा हृदय अहोभाव से भर जाये। हम

कल्पना नहीं कर सकते कि वे हमें कितना दे रहे हैं। अनावृत हमारे पर उनकी कृपा की वर्षा हो रही है, किन्तु हम सदैव फरियाद ही किया करते हैं कि भगवान ने ऐसा नहीं किया, वैसा नहीं किया। आप स्वयं विचारें – यह कहाँ तक उचित है ?

इतना कहकर पूज्यश्री ने जो रूद्राक्ष की माला पहनी थी, वह दिखाई और कहा कि –

इस माला का मूल्य पाँच-सात हजार होगा। हमें इसका मूल्य पता है, इसलिए हम जब गंगा में नहाने गये तो इसको गठान लगा दी ताकि यह पानी में न गिर जाये। हमें इस माला की कद्र है तो यह हमारे पास है और कद्र नहीं होती तो हमें पता नहीं रहता और खो जाती। नश्वर वस्तुओं को संभालने के लिए उनकी कद्र होना जरूरी है तो शाश्वत परमात्मा की कृपा को बनाये रखना हो तो उनकी भी कद्र करनी चाहिये। हमें उनकी कृपा की कद्र नहीं है, इसलिए हम सदैव फरियाद करते रहते हैं।

ऐसा भी नहीं है कि हमें भगवान की कृपा की अनुभूति नहीं होती। अनुभूति तो होती है, किन्तु फिर भी हम फरियाद करते ही रहते हैं। हमें भगवान ने क्या दिया है, कितना दिया है

– उस पर कभी ध्यान नहीं देते। भगवान ने जो दिया है यदि हम उसकी कद्र करें, उसकी समीक्षा करें, तो हम कहाँ के कहाँ पहुँच जाएँ!

जो ईश्वर के रास्ते पर चलते हैं वे फरियाद नहीं करते और जो फरियाद करते हैं, वे अपने लक्ष्य तक पहुँच नहीं सकते।

'जो मंज़िल चलते हैं, वे शिकवा नहीं करते।
जो शिकवा करते हैं, वे पहुँचा नहीं करते॥'

सदैव याद रखना, जितनी हमारी योग्यता है उससे कहीं अधिक भगवान ने हमें दिया है। किन्तु हमारी हालत उस मूर्ख जैसी है जो फल को तो कचरे में फेंक देता है और उसके छिलके को संभालकर रखता है। भगवान के प्रेम की, गुरु की करुणा की, उनके उपकार की तो हमें कोई कीमत नहीं, किन्तु हमारे हित के लिये उनके द्वारा दी जानेवाली डाँट-फटकार को याद करके हम दुःखी होते रहते हैं। फल में तो छिलके का कोई महत्व नहीं होता, किन्तु गुरु के द्वारा दी जाने वाली डाँट और उनके द्वारा होने वाली हमारी कसौटी में भी हमारा परम हित ही

निहित होता है।

जब भी आपकी कोई कसौटी होती है, तो यह निश्चित रूप से याद रखना कि आपको इसकी जरूरत है और जब तक आपकी क्षति निर्मूल नहीं होती तब तक आपकी कसौटी होती ही रहेगी। इससे आप अधिक मजबूत और परिपक्व बनते जाओगे। हर परिस्थिति में आप तो सिर्फ धन्यवाद देते जाओ कि गुरु हमें अपना मान रहे हैं, तभी तो हमें डाँट रहे हैं। रोने-धोने और फरियाद करने में ही जीवन गँवा देना मूर्खता नहीं तो और क्या है ? इसलिए सावधान हो जाओ। इतने साल सुख और आनंद मिलने के बाद थोड़ा दु:ख मिले तो फरियाद करके भगवान को दोष मत दो।

इस मार्ग में कृतज्ञता बहुत आवश्यक है। जब व्यक्ति कृतज्ञ होता है, तब फरियाद नहीं करता, दोष नहीं देखता, सिर्फ धन्यवाद देता है। भगवान और गुरुदेव द्वारा की गई करुणा की कद्र करना हम सभी का कर्तव्य है। जो उसकी कद्र नहीं करते, उनका जीवन स्थगित हो जाता है।

(१४)

प्रसन्न चित्त और उद्योगी कार्यकर्ता को प्रकृति हर संभव सहायता करती है

(18 मई, टिहरी)

योगियों की तपोभूमि हिमालय के गढ़वाल क्षेत्र में टिहरी नामक स्थान है जहाँ पर स्वामी रामतीर्थ ने भी साधना की थी। वहाँ के एकांत रमणीय स्थान पर पूज्य साँई पधारे। इतनी उँचाई पर भी कुछ चुनिंदा साधक खबर पाकर पहुँच ही गये। शाम के समय आसमान बादलों से घिर गया और शीतल पवन की लहरें वातावरण को सुगंधित बनाने लगीं। इस खुशनुमा वातावरण को और भी आल्हाददायक बनाते हुए श्रीजी टेकरी पर से नीचे पधारे। तेज हवा के कारण उनका पीतांबर लहराने लगा। श्रीसाँई के मुखारविन्द पर मधुर मुस्कान देखकर भक्तों के मन भी आनंद से प्रफुल्लित हो गये और सभी ने चारों ओर से साँईजी को घेर लिया। भक्तों के बीच श्रीसाँई ऐसे लग रहे थे जैसे तारों के बीच चन्द्रमा शोभायमान होता है। इस दृश्य को अपनी स्मृति में कैद करने के लिए सभी साँईजी की ओर

टकटकी लगाकर देखने लगे, तो कुछ साधक भक्त अपने कैमरे में इस दृश्य को कैद करने लगे। ऐसे रमणीय वातावरण में अपनी सरल वाणी में सफलता का रहस्य समझाते हुए पूज्य श्री ने कहा कि –

सदैव प्रसन्न रहो। प्रसन्न चित्त और उद्योगी कार्यकर्ता को प्रकृति सदैव हर प्रकार से मदद करती है। हो-होकर क्या होगा ? बिगड़-बिगड़ कर क्या बिगड़ेगा ? जो कुछ बनेगा या बिगड़ेगा वह इस शरीर का बिगड़ेगा और शरीर तो सदा रहनेवाला है ही नहीं। चिन्ता करने से नहीं अपितु उद्योगी बनने से ही सफलता मिलती है। अपने लिये कुछ भी न चाहो, सदैव देते रहो। परहित करने से हृदय शुद्ध होता है और प्रसन्नता मिलती है।

कुछ लोगों के चेहरे ही ऐसे होते हैं कि जैसे इमली खाई हो, मानो लगता है कि शोकागार से आ रहे हैं। कुछ लोगों के चेहरे इतने प्रसन्न होते हैं कि उनको देखकर देखनेवाले भी खुश हो जाते हैं। रोते चेहरे हँसने लगते हैं। प्रसन्न चित्त रहना मोतियों का खजाना देने से भी उत्तम है।

'हर हाल में खुशहाल रह

निर्द्वन्द चिंताहीन हो।

मत ध्यान कर तू अन्य का,

बस आप में लवलीन हो॥'

निराशा, रोना-धोना - यह कभी धर्म या आध्यात्मिकता नहीं हो सकती। सदैव प्रसन्न और खुशहाल रहने से शीघ्र ही ईश्वर के निकट पहुँचा जा सकता है। तकलीफों और मुसीबतों से छूटने की युक्ति भी प्रसन्न व्यक्ति जल्दी पा लेता है।

इतना कहकर साँई गुनगुनाने लगे -

दर्द दिल में ही छुपाकर

मुस्कुराना सीख ले,

गम के पर्दे में खुशी के,

गीत गाना सीख ले।

तू अगर चाहे तो तेरा गम

खुशी हो जाएगा,

मुस्कुराकर गम के

काँटों को जलाना सीख ले।

यह निश्चित समझना कि आपके पास जो भी परिस्थितियाँ आयेंगी वे आपके कल्याण के लिए ही होंगी। इसलिए सदैव प्रसन्न रहो। पूज्य बापूजी का तो यह मुख्य सूत्र है 'सदैव प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है।'

जब भी आप दु:खों और मुसीबतों से घिर जाएँ, तब हताशा का त्याग करके प्रसन्न चित्त होकर पुरुषार्थ करें। आप देखेंगे कि मुसीबतें और विघ्न-बाधाएँ स्वत: दूर हो रहीं हैं। अपना प्रत्येक कार्य हिम्मत और जवाबदारीपूर्वक करो। अपने लक्ष्य को पाने के लिए कड़ी मेहनत करो। क्या यह अमूल्य जीवन व्यर्थ बातों और कल्पनाओं में ही गँवा दोगे ? क्या आपका कोई निश्चित लक्ष्य है ? लक्ष्यहीन जीवन जीकर यहाँ-वहाँ घूमने में ही समय बरबाद करना - कहाँ की बुद्धिमानी है ?

समय तेजी से बीत रहा है। इसलिए सावधान होकर तत्परतापूर्वक अपने लौकिक और अलौकिक कार्य में लग जाओ।

उद्यमेन ही सिद्धयन्ति कार्याणि न मनोरथैः ।

न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविश्यन्ति मुखे मृगाः ॥

सफलता उद्योगी का ही वरण करती है। पुरुषार्थ के बिना किसी को सिद्धि मिलना मुश्किल है । इसीलिए हँसते-मुस्कुराते अपने परम पुरुषार्थ को साधते चलो, यही सफलता का राजमार्ग है।

(१५)

स्वयं ही अपने उद्धारक बनें

(7 सितम्बर, वृन्दावन)

सत्संग के बाद पूज्यश्री साँई सायं भ्रमण के लिए गये। वहाँ से अपने निवास पर आये तो श्रद्धालुओं का जमघट लगा हुआ है। साधकों की तपस्या व परमात्म-रुचि को देखकर करुणावरुणालय पूज्यश्री का हृदय छलक उठा –

स्वयं ही अपने गुरु बनो। भगवान बुद्ध कहते थे

'अप्त दीपो भव'

अर्थात् अपने दीपक आप बनें। ईश्वर कृपा, गुरु कृपा और आत्म कृपा ये तीनों चीजें मिल जायें तो आत्म-कल्याण निश्चित हो जाता है। ईश्वर कृपा और गुरु कृपा तो है ही किन्तु हम लोग अपने आप पर कृपा नहीं करते तो कार्य पूर्ण नहीं होता।

निराशा, उद्विग्नता, किंकर्तव्यविमूढ़ता का त्याग करके

आलस्य, प्रमाद रहित होकर विधेयात्मक विचार करो।

साँईं ने एक उदाहरण बताते हुए कहा –

भागवत में पिंगला वैश्या की कथा आती है। एक बार वह वैश्या खिड़की पर खड़ी थी। दूर से भगवान दत्तात्रेय आ रहे थे। उनकी नज़र उस वैश्या पर पड़ी और उस वैश्या का जीवन बदल गया। उसने आत्म कृपा की तो गुरु कृपा भी सार्थक हो गई। अगर आप अपने पर कृपा करें, अपने साथ मित्रता का व्यवहार करें तो गुरुकृपा और ईश्वर कृपा अपने आप खींचकर चली आती है। हमें मिला हुआ उत्तम कोटि का यह मानव जीवन या तो उपेक्षा के कारण नष्ट हो रहा है या तो भोग-विलास में बर्बाद हो रहा है और आश्चर्य तो इस बात का है कि इस बात का हमें कोई दु:ख भी नहीं है!

जीवन हर रोज नया रूप धारण कर रहा है, हर रोज एक नई आशा का जन्म होता है। अगर आप यत्न करो तो प्रत्येक दिन आपको अपने लक्ष्य के करीब पहुँचाने की शक्ति देता है। अपूर्व उत्साह के साथ ईश्वर प्राप्ति की साधना में लग जाओ। अपने चरित्र रूपी इमारत का निर्माण बड़ी सावधानी के साथ करो।

कोई भी परिस्थिति पहले से निर्मित नहीं होती। हम जैसा उसे बनाना चाहते हैं, वह वैसी ही बन जाती है। आपको जिसकी आवश्यकता है वे तमाम शक्तियाँ आपके भीतर ही हैं, अतः स्वयं ही अपने भाग्य के निर्माता बनो। इतने शक्ति सम्पन्न बनो कि अपना और अपने संपर्क में आनेवालों का कल्याण कर सको।

खुदी को कर बुलंद इतना कि

हर तकदीर से पहले खुदा

बन्दे से खुद पूछे

बता, तेरी रज़ा क्या है ?

अपने पैरों पर खड़े होकर अपने ईश्वरत्व की घोषणा करो। कब तक दीन-हीन होकर दूसरों की ओर ताकते रहोगे ? उठो और असीम उत्साह और बल के साथ अपना लक्ष्य सिद्ध करो। सभी दोष, शोक, भय और चिंता आपके दिमाग की उपज हैं। जिस तरह आपने उन हानिकारक विचारों को पकड़ा है, उसी तरह आप उन्हें छोड़ भी सकते हैं। उन्हें पकड़कर अशांत और दुःखी बनो या उन्हें छोड़कर शांति और

आनन्द का अनुभव करो, यह आपके हाथ की बात है।

इतना कहकर साँई मौन हो गये । बैठे हुए सभी भक्त उनके अमृतमय आप्तवचनों को सुनकर समाहित होते गये।

(१६)

भगवान की कृपा की प्रतीक्षा नहीं, समीक्षा करो

(7 जुलाई, अहमदाबाद)

श्री साँई अहमदाबाद आश्रम में पधारे हुए हैं। सभी साधक साँई के दर्शन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। दोपहर के करीब तीन बजे सबकी प्रतीक्षा का अंत हुआ। पूज्य साँई शांति कुटीर से बाहर आकर पांडाल में कुर्सी पर विराजमान हुए। साँई के बाहर आने का समाचार पाकर कुछ ही क्षणों में आश्रमवासी और दूसरे साधक भी पांडाल में आने लगे। भगवद्कृपा की महत्ता समझाते हुए उन्होंने कहा –

भगवान की कृपा तो नित्य निरन्तर बरस रही है। हमें उस कृपा की प्रतीक्षा नहीं, समीक्षा करनी चाहिए। जैसे गुड़ में

मिठास स्वाभाविक है, कहीं से लानी नहीं पड़ती। मिठास की अनुभूति करने के लिए उसे चखना पड़ता है, उसकी समीक्षा करनी पड़ती है। इसी प्रकार भगवत् कृपा का भी अनुभव करना चाहिए, उसकी समीक्षा करनी चाहिए। उनकी समीक्षा का मतलब है उनके प्रति प्रेम और अहोभाव होना।

जैसे लगातार बारिश हो रही हो तो उसमें बर्तन रखने पर वह भरने लगता है। अब यदि बर्तन बड़ा हो तो उसमें पानी ज्यादा भरता है और छोटा हो तो उसमें पानी कम भरता है। और यदि पात्र को उल्टा ही कर दें तो उसमें पानी की एक बूँद भी नहीं आती। इसी प्रकार भगवान की कृपा तो अनावृत बरस ही रही है, हमारा पात्र जितना बड़ा होगा, उतनी ही ज्यादा कृपा मिलेगी। अगर मन रूपी पात्र उल्टा होगा अर्थात् मन फरियादात्मक होगा, अभिमान और अश्रद्धा के दुर्गुणों से युक्त होगा तो हमें उनकी कृपा की अनुभूति नहीं होगी। धन्यवाद और अहोभाव के द्वारा मन रूपी पात्र को सीधा कर दोगे तो भगवद् कृपा की अनुभूति अवश्य होगी। एक और दुर्गुण हमें भगवत् कृपा का अनुभव नहीं होने देता। वह है निराशा और नकारात्मक चिंतन। बरसात आ रही है पर आप छाता लेकर खड़े हो जाओ तो भी आपको बारिश की अनुभूति नहीं होगी।

निराशा और नकारात्मक चिंतन भी उसी छाते की तरह हैं जो आपको कृपा की अनुभूति नहीं होने देते।

भगवान की कृपा का कोई अभाव नहीं है, किन्तु श्रद्धा टिकी रहे और उसका अनुभव हो, उतना धैर्य हममें नहीं है। भगवान की कृपा अनेक रूपों में हमारे सामने आती ही रहती है। उसे देखने की नज़र और उसका अनुभव करने की तड़प हमारी होनी चाहिये। परमात्मा कब, किसके द्वारा, किस रूप में अपनी कृपा बरसा दें - उसका अनुमान लगाना मुश्किल है।

(१७)

शरणागति का महत्व

(14 सितम्बर–रतलाम)

मध्यप्रदेश के रतलाम शहर में पूज्य साँई का सत्संग कार्यक्रम आयोजित हुआ। सुबह के सत्र के बाद पूज्य श्री अपने निवास स्थान पर हैं। वहाँ भी दूर–दूर से आये भक्तजन साँई के दर्शनों की अभिलाषा से पहुँच गये। मुरादाबाद की योग वेदान्त सेवा समिति के सदस्य पूज्यश्री से मुरादाबाद में सत्संग कार्यक्रम की याचना करने आये हैं। उनसे विचारणा करने के बाद श्रीसाँई ने फल, मिठाई के प्रसाद के साथ सत्संग का प्रसाद देते हुए कहा –

कई लोग भगवान को बल से तो कई धन से तो कई सत्ता से पाना चाहते हैं, किन्तु वे लोग असफल हो जाते हैं, क्योंकि भगवान केवल शुद्ध भक्ति, सच्ची शरणागति से प्रसन्न होते हैं।

सभी साधनाओं में शरणागति का महत्व सबसे ऊँचा है। शरणागति के कारण भक्त में इतनी योग्यता, इतनी ऊँचाई आ जाती है, इतनी दिव्यता, इतना अहोभाव आ जाता है कि वह देवतुल्य हो जाता है। शरणागति में भक्त अपने को पूर्णरूपेण भगवान को सौंप देता है और बदले में पूरे भगवान को पा लेता है। अपने को पूर्ण समर्पित करने से भक्त चिर शांति का अनुभव करता है और भगवान में ही लीन रहता है। जब भक्त भगवान की आज्ञा का उल्लंघन करता है, तब दु:ख पाता है और इसी कारण वह साधना में भी पीछे रह जाता है। आराध्य या भगवान के वचनों में बहुत शक्ति होती है। अगर उनमें श्रद्धा रखकर भक्त चलता है तो ऐसा क्या है जो वह प्राप्त नहीं कर सकता!

भगवान को समर्पण करने से या उनकी शरण लेने से परम सुख का अनुभव होता है, किन्तु सुख के लिए समर्पण न करो। समर्पण इसलिए करो कि वे भगवान हैं और उनको समर्पण किये बिना हमारा कोई अस्तित्व ही नहीं है। जैसे माता की गोद में बच्चा पूर्णत: आश्रित और पूर्णत: सुरक्षित होता है, वैसे ही भगवान की शरण लेने से भक्त अपने को पूर्ण सुरक्षित मानता है।

अपनी ओर से प्रयास तो करो, किन्तु आगे भगवान पर छोड़ दो। अपना प्रयत्न तो करो किन्तु प्रयत्न के बाद शांत हो जाओ, भीतर से भगवान को समर्पित हो जाओ। फिर देखो कार्य अपने आप सिद्ध होने लगेंगे। पानी जब गरम होकर सौ डिग्री तक पहुँचता है, तब भाप बन जाता है। वैसे ही श्रद्धा सौ डिग्री तक पहुँचती है, तब शरणागति आती है। अर्जुन में जब ऐसी शरणागति आयी तब वह कहता है कि 'हे केशव ! अब मैं आपकी आज्ञा अनुसार करूंगा'। तब उसको पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति होती है। ऐसे ही हम भी स्वयं को उसी सर्वसमर्थ की शरण में सौंप दें तो सहज में ही निश्चिंतता, निर्भीकता एवं चिर-शांति के अधिकारी बन जायेंगे।

(१८)

परहित सरिस धरम नहीं भाई – निःस्वार्थ बनो

(मई, टिहरी)

परहित का विचार करने मात्र से हृदय में सिंह जैसा बल आ जाता है। निःस्वार्थ सेवा करने से अंतःकरण शुद्ध होता है। दूसरों की सेवा असल में खुद की ही सेवा है। जो मूक रहकर शांति से, स्वस्थ चित्त से दूसरों की सेवा करता है, सेवा का दिखावा नहीं करता वह मानव रूप में पृथ्वी पर का देवता है। अन्य के लिए किया हुआ थोड़ा सा भी कार्य आपकी आंतरिक शक्तियों को जागृत कर देता है।

प्रकृति का यह नियम है कि आप जो देते हैं वही घूम-फिर कर आपके पास आ जाता है। भूमि में आप जैसे बीज डालते हैं, वैसे ही अनंत गुना होकर आपको मिलते हैं। आप जितना दूसरों का कल्याण करते हैं, दूसरों के लिए शुभ चिंतन करते हैं, उतना ही आपका अंतःकरण शुद्ध होता जाता है।

स्वार्थी वृत्ति तुच्छता और संकुचितता लाती है। नि:स्वार्थता अंत:करण को विशाल एवं दिव्य बना देती है। परोपकार करने से, नि:स्वार्थ सेवा करने से हृदय में जो शांति और आनंद मिलता है, वह किसी धन, वैभव या सत्ता से नहीं मिल सकता। हृदय का आनंद ही वास्तविक धन है।

जिनका पूरा जीवन ही परहित के लिए समर्पित है, ऐसे पूज्य साँईं अपने मधुर स्वर में अपना ही स्वरबद्ध किया भजन गुनगुनाने लगे –

भूखे जन की क्षुधा मिटाना
प्यासे की तुम प्यास बुझाना।
रोते को भी धैर्य बंधाना
भटके जन को मार्ग बताना।
अंधकार में ज्योति जलाना
साधो ! साधना नहीं भुलाना॥

(१९)

हटा दो निंदा नफ़रत को अगर दुनिया में जीना हो

(31 जनवरी, गोधरा)

सदैव द्वेष और ईर्ष्या से स्वयं की रक्षा करनी चाहिए। दूसरों को उन्नत देखकर जलने से अपनी उन्नति नहीं अपितु पतन होता है। उधई जैसे लकड़ी को खोखला कर देती है, उसी प्रकार डाह और जलन मानव हृदय को खोखला कर देते हैं और व्यक्ति के दूसरे गुणों को भी ढंक देते हैं। अपने संपर्क में आनेवालों के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करो, किसी की उन्नति को देखकर क्यों जलना ? हो सके तो उनके सत्कर्म में सहकार दो और उनके कल्याण की कामना करो। जिस प्रकार दूसरों के रोगों की चर्चा करके आप निरोग नहीं हो सकते, उसी प्रकार दूसरों के दोषों की चर्चा करके आप निर्दोष नहीं हो सकते।

"हटा दो निंदा-नफ़रत को गर दुनिया में जीना हो"

(२०)

साधक को भला मुसीबत कैसी ?

(31 जनवरी - गोधरा)

गोधरा के संत श्री आसारामजी आश्रम में श्रीजी पधारे हैं। समाचार मिलते ही सैकड़ों की संख्या में साधक साँईजी के दर्शन हेतु आने लगे। कुछ साधक अपनी उलझन साँईजी के समक्ष रखने लगे। एक साधक ने कहा कि 'मुझे व्यापार में बहुत तकलीफ हो रही है और पार्टनर भी मुझे परेशान कर रहा है। सत्संग में आता हूँ तो घर के लोगों को अच्छा नहीं लगता और वे लोग मना करते हैं।'

श्रीसाँई उसका हौसला बुलंद करते हुए कहने लगे -

साधक को भला मुसीबत कैसी ? मुसीबतें और बाह्य तकलीफें तो आती रहती हैं, किन्तु जो अपनी साधना में अडिग होता है, जिसको अपने मंत्र और भगवान में पूर्ण विश्वास होता है, उसके सामने मुसीबतों की क्या ताकत कि वे

ज्यादा देर तक टिक सकें ?

जिस प्रकार हाथी रास्ते से जाता है, तब गली के कुत्ते भौंकते हैं, किन्तु उसके कारण वह अपना मार्ग नहीं छोड़ता, ऐसे ही साधक ईश्वर के रास्ते चलता है तो संसारी लोग उसे रोकें तो उनकी बातों की उपेक्षा करके सत्य-प्राप्ति के साधक को अपने साधना पथ पर अग्रसर होते रहना चाहिए। जो थोड़े विरोध से साधना के मार्ग को छोड़ देता है, वह साधक अभी कच्चा है, पक्का नहीं है।

अगर आप सही हो, कोई अनैतिक कार्य या शास्त्र विरूद्ध कार्य नहीं कर रहे हो तो आपको डरने की जरूरत नहीं है। चाहे दुनिया आपके बारे में कुछ भी क्यों न कहे !

साधक का कर्त्तव्य है कि समाज की परवाह किये बिना शास्त्र-सम्मत आचरण करें । बेदरकारी, लापरवाही, पलायनवादिता एवंआलस्य-प्रमाद ऐसे खतरनाक अवगुण हैं जो मानव की शिक्षा, दीक्षा व योग्यता का हरण कर लेते हैं, उसे अवनति के महान गर्त में ले जाते हैं। अत: सावधानी रखें कि जीवन में कोई दोष व दुर्गुण न घुसने पाए।

...

मिली हुई सेवा को अपनी कुशलता व तत्परता से सुन्दर बनाकर समाज रूपी परमेश्वर की सेवा में अपने तन-मन-बुद्धि व जीवन को लगाना ही संत कीं आज्ञा है।

अपने मन की न करके मिली हुई सेवा को मनपसंद बना लेना ही नि:स्वार्थी होने का लक्षण है। इससे अंत:करण शुद्ध होकर परमात्मा प्राप्ति हो जाती है। यही गुरुकृपा प्राप्त करके मानव जीवन को सफल बनाने का अचूक राजमार्ग है। जो साधक उपरोक्त गुरु-वचनों को अपने जीवन में उतारतों है, उसे विघ्न-बाधाएँ विक्षिप्त नहीं कर सकतीं। अपितु विघ्न-बाधाएँ ही उससे विक्षिप्त हो जाती ह। ऐसा अनुपम सामर्थ्य है गुरुवचनों में!

मुख्य आश्रमः-
श्री श्री नारायण प्रेम साँई आनंद निकेतन
पेढ़माला पर्वत, उदयपुर-अहमदाबाद राजमार्ग नं ८,
श्यामलाजी हिम्मतनगर के बीच
गांभोई से १२ कि.मी, जिला साबरकांठा,
गुजरात- 383030
फोन : 09375329933, 02772-250111

भारत प्रेरणा शक्तिपीठ
साँई सेवाश्रम (महिला प्रकोष्ठ),
गांव मुछनीपाल, पो.ऑ. सरवाणा,
गांभाई, जि.साबरकांठा, हिम्मतनगर
गुजरात - 383030
फोन : 02772 - 250777

श्री श्री नारायण प्रेम साँई आनंद निकेतन (म.प्र)
मांगल्य मंदिर (धर्म क्षेत्र)
रतलाम, मध्यप्रदेश
फोन : 07412 - 260012/22

साँई संस्थान, मुबंई (महाराष्ट्र)
पो.ऑ.चंदनसार, कुभांरपाड़ा,
शिरगांव, विरार (पूर्व)
जि.थाणे, महाराष्ट्र
फोन : 09821069632, 09867287658

साँई ध्यान योगपीठ (आश्रम), हिमाचल प्रदेश
गांव बडाग्रां, व्हाया पतलीकुल,
कुल्लु-मनाली रोड़, हिमाचल प्रदेश
फोन :- 09817170506, 9816050416 (पकंज भाई)

भगवान श्री श्री नारायण प्रेम साँई आनंद निकेतन, बिहार
अहिल्या उद्धार स्थल, व्हाया कामतोल (चहुटा),
जि. दरभंगा, बिहार
फोन :-281060

श्री श्री नारायण प्रेम साँई सेवा केन्द्र, (गुजरात)
कोसंबा, जि. सूरत, गुजरात
फोन :-02639-232403, 09825455901

साँई पिरामिड तप आश्रम (उ. प्र)
नैमिष्यारण्य, उत्तर प्रदेश
फोन :- 09415008282

श्री श्री नारायण प्रेम साँई कल्याण आश्रम, मेघनगर (म.प्र)
कल्लीपुरा, जि.झाबुआ,
मेघनगर (म.प्र)
फोन :- 07390284334,336

श्री श्री नारायण प्रेम साँई ध्यान केन्द्र (लोकहित आश्रम)
ग्राम गहलाना, पो.ऑ.मंगोली, जि.नैनिताल , उत्तरांचल - 263001 फोन : 09410150067

श्री श्री नारायण प्रेम साँई आनंद निकेतन

द्वारा कुल १११ सामग्रियों का उत्पादन होता है जैसे कि अगरबत्तियाँ, आयुर्वेदिक औषधियाँ जैसे ज्वरनाशक चूर्ण, त्रिफला चूर्ण, रसायन योग; आयुर्वेदिक क्रीम, शैम्पू, टूथपेस्ट, गुलकन्द, च्यवनप्राश, आँवला कैन्डी, नेत्र बिन्दू, अमृत द्रव, शहद, गुगल धूप, आयुर्वेदिक शरबत, तिलक चंदन, साँईजी के आकर्षित लैमिनेशन आदि ।

पूज्यश्री साँई के प्रेरणादयी अमृतवचनों पर आधारित सत्साहित्य

१. साँई उवाच
२. ज्योत से ज्योत जगाओ
३. छोटी-छोटी ऊँची बातें
४. वन्दे साँई नारायणम्
५. साक्षात्कार की राह
६. बालयोगी के सान्निध्य में
७. न करो अपना घात आत्महत्या महापाप....
८. त्वेमकं शरण्यं
९. साँई जीवन गाथा
१०. निन्दकों पर कृपा कीजिये
११. शांति महारस सुख दरिया
१२. जाग जाग रे जाग...
१३. भगवान कौन, क्यों और कैसे?
१४. भक्तिमाला के १०८ अनमोल मोती

पूज्यश्री के सत्संग, भजन, कीर्तन व ध्यान की ऑडियो सी.डी व Mp3

१. वेदान्त श्रृंखला-१
२. भजन श्रृंखला- १, २, ३
३. हे नाथ तुमको पाकर....
४. फकीरी मौज
५. जाग सके तो जाग
६. कदम अपने आगे बढ़ाता चला जा- १, २
७. नूरानी नूर
८. अलख निरंजन ॐ
९. मंत्र साधना
१०. साधो ! साधना नही भुलाना...
११. हरि ॐ तत्सत्

पूज्यश्री के सत्संग की VCD व DVD

१. वैदिक सिद्धांत

२. समत्वं योग उच्यते

३. गीता मे हृदयं पार्थ

४. नारी शक्ति जागृत सदा

५. संत परमहितकारी

६. दीद हैं दो पर दृष्टि एक है।

५. मन के हारे हार,
मन के जीते जीत

पूज्यश्री साँई के सत्संग, भजन व कीर्तन की ऑडियो कैसेट्स

१. सारस्वत्य मंत्र
२. वेदान्त श्रृंखला- १
३. भजन श्रृंखला- १, २, ३
४. हे नाथ तुमको पाकर...
५. मौजिले भजन
६. जब उमड़ा दरिया उल्फत...
७. नूरानी नूर
८. महामृत्युंजय मंत्र
९. ॐ नमः शिवाय
१०. तू ही तू कीर्तन
११. गमे ते स्वरुपे(गुजराती)

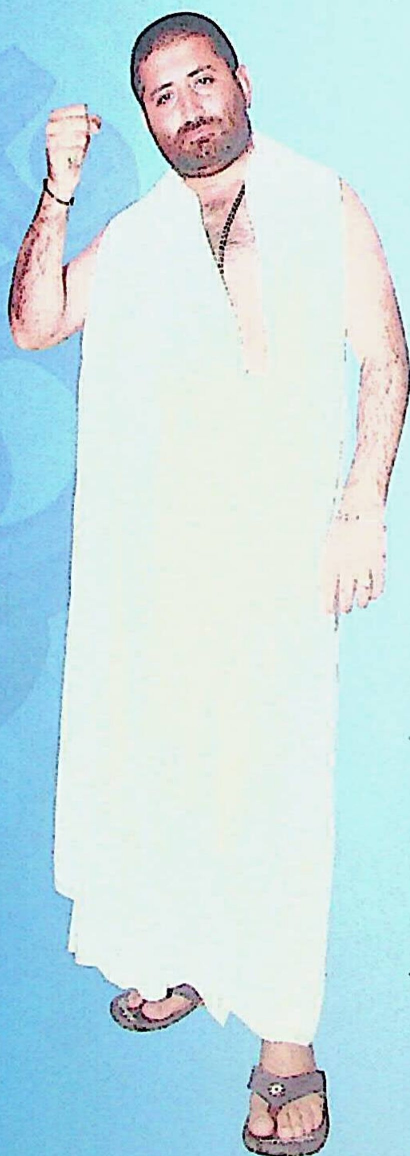


श्री श्री नारायण प्रेम साँई

कुछ लोगों के चेहरे ही ऐसे होते हैं कि जैसे इमली [illegible] हो मानो लगता [illegible] से आ [illegible]। कुछ लोगों के चेहरे [illegible] प्रसन्न होते हैं कि उनको देखकर देखने वाले भी खुश हो जाते हैं, रोते चेहरे हँसने लगते हैं। प्रसन्न चित्त रहना मोतियों का खजाना देने से भी उत्तम है।



अपने पैरों पर खडे होकर अपने ईश्वरत्व की घोषणा करो । कब तक दीन-हीन होकर दूसरों की ओर ताकते रहोगे? उठो और असीम उत्साह और बल के साथ अपना लक्ष्य सिद्ध करो । सभी दोष, शोक, भय और चिंता आपके दिमाग की उपज है ।



श्री श्री नारायण प्रेम साँईजी